IJFANS INTERNATIONAL JOURNAL OF FOOD AND NUTRITIONAL SCIENCES
ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10 ,Iss 1, 2021

वेदान्त दर्शन का सार – ''गीता''

डॉ.डॉली पाण्डेय

सहायक प्राध्यापक

अग्रसेन महाविद्यालय,रायपुर ;छ.ग.द्ध

सांराशः– भगवद्गीता अत्यंत ही समादर.ाीय ग्रन्थ है। भगवद्गीता मानव धर्म का ग्रन्थ है। गीता के द्वार सभी के लिए खुले हुए है। कामधेनु और कल्पवृक्ष से इसकी तुलना होती है। महात्मा गॉधी ने गीता की तुलना जगतमाता से की है। भगवद्गीता मानव को सही राह में चलने और असत्य, अन्याय से दूर रहने का संदेश देती है।

मूल शब्दः– 01. स्वधर्म, 02. कर्मकौशल, 03. क्षरपुरूष, 04. स्थितप्रज्ञ, 05. तादात्मय, 06. अख.डचिदानन्द।

भगवान श्री कृष्ा ने अर्जुन को कुरूक्षेत्र में जो उपदेश दिया वही वेदान्त दर्शन का सार–''गीता'' है। यह गोपालनन्दन श्रीकृष्ा द्वारा अर्जुन को बछड़ा बनाकर उपनिषद रूपी गायों से दुहा अमृतमय दूध है। जिसे सुधीजन पीते है।

अर्जुन के सारथी भगवान श्रीकृष्ा है। अर्जुन जब अपने सामने परिजनों, गुरूजनों और सगे–सम्बधिंयों को देखता है तो वह युद्ध करने से साफ मना कर देता है। श्रीकृष्ा अर्जुन को समझाते है कि धर्म के लिए किया युद्ध हमेशा विजयी होता है युद्ध करना उसका धर्म है। श्रीकृष्ा ने अर्जुन से कहा कि ''जैसी तुम्हारी इच्छा हो, वही करों''।(01)

अर्जुन ने श्रीकृष्ा को उत्तर दिया '' आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है, अतः मैं जैसा आपने कहा वही करूंगा''।(02)

''जो असत् है उसका भाव नही हो सकता, और जो सत् है उसका कभी अभाव नही हो सकता''।(03)

शरीर नश्वर है और आत्मा नित्य है। आत्मा शरीर के साथ नष्ट नहीं होता है। ''जिस प्रकार कोई व्यक्ति पुराने जी.ार्ा वस्त्रों को उतार कर दूसरे नए वस्त्रों को पहन लेता है उसी प्रकार आत्मा पुराने शरीरों को छोड़कर नए शरीरों को धार.ा करती है''।(04)

ब्रम्ह के सगु.ा और निर्गु.ार्ा दोनों रूप को गीता मानती है। ये दोनों रूप एक ही अभिन्न तत्व के है।

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved,

''जिस प्रकार सूत्र में मि.ि–ग.ा पिरोये रहते है उसी प्रकार ब्रम्ह में समस्त विश्व अनुस्यूत है। (05)

'' विश्वात्मा होते हुए भी वह विश्व में सीमित नही है। वह विश्वातीत भी है, यह उसका अनुत्त्म पर भाव है'' ।(06)

परमेश्वर की दो प्रकृतियेां का व.र्ान गीता में है– अपरा और परा। ''अपराप्रक्ति को क्षेत्र और क्षर पुरूष भी कहा गया है। परा प्रकृति में चैतन जीव आते है। उसकी अन्य संज्ञा क्षेत्रज्ञ और अक्षर पुरूष भी है'' ।(07)

पुरूषेात्तम ही परम तत्व है। '' क्षर पुरूष (जड़प्रकृति) और अक्षर पुरूष (जीव) इन दोनों के उपर उत्तम पुरूष या पुरूषेात्तम है'' ।(08)

गीता के गौरव का प्रतीक ज्ञान कर्म और भक्ति का विलक्ष.ा समन्वय है। योग का अर्थ है मिलन अर्थात् जीवात्मा का परमात्मा से मिलन जिससे दोनों दो न होकर एक हो जावें। 3

''कर्म योग अर्थात् कर्मकौशल (कामनारहित कर्म)''(09)

''भक्तियोग योग भक्ति द्वारा भगवत्–तत्व का सम्यक् ज्ञान और भागवत प्रवेश है'' ।(10)

योग वह है जिसमें स्थित योजी तत्वज्ञान से विचलित नही होता अतीन्द्रिय तथा शुद्ध ज्ञानगम्य अख.ड आनन्द का अनुभव करता है। ''जो दुख के संयोग से सर्वथारहित है वही योग है'' ।(11)

बिना ज्ञान के योग शारीरिक और मानसिक व्यायाम मात्र है।

''योगी का लक्ष्य अपरोक्षानुभूति द्वारा आत्मसाक्षात्कार है जो बिना ज्ञान सम्भव नहीं भगवान अपने भक्तों को कृपा करके ज्ञान योग प्रदान करते है जिससे वे उन्हें पा सकें'' ।(12)

संसार–सागर को ज्ञान–यान से ही पार किया जा सकता है।

''कर्म की परिसमाप्ति ज्ञान में होती है'' ।;13द्ध

''भगवान ने ज्ञानी को अपनी आत्मा कहा है'' ।;14द्ध

''ज्ञान निष्ठा की परिपू.ाता के दो रूप हैः– एक तो सर्वत्र जगत की समस्त चेतनाचेत वस्तुओं में भगवत् तत्व या आत्मतत्व को देखना और दूसरा रूप है भगवद् या आत्मा में समस्त विश्व को देखना दोनों रूप एक–दूसरें के पूरक है'' ।(15)

''कर्म.येवाधिका रस्ते मा. फलेषु कदाचन'' 4

गीता का निष्काम कर्म ज्ञानीद्वाराही सम्पादित हो सकता है। देहधारी प्रा.ी के लिए कर्मों का सर्वथा त्याग सम्भव नही है'' ।(16)

गीता में कहा गया है ''तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है कर्म फल में तुम्हारा कोई अधिकार नही है, अतः तुम कर्म फल की कामना का फलासक्ति मत करो, और न ही तुम्हारी प्रवृत्ति कर्म न करने में हो'' ।(17)

पू.ातः निष्काम कर्म तो जीवन्मुक्त सिद्ध पुरूष के लिए हो सम्भव है। गीता का निष्काम कर्म ज्ञान और भक्ति दोनों से प्रेरित है।

''जैसे सूर्य की स्थिति मात्र से प्रकाश फैलता है। भगवान स्वयं कहते है कि उनके लिए कोई कर्तव्य शेष नही है, फिर भी उनके द्वारा कार्य सम्पादन हो रहा है अन्यथा समस्त लोगों का उच्छेद हो जाए'' ।(18)

गीता का हद्य भक्ति है। गीता उपदेश का प्रारम्भ शर.ागति से होता है जिससे अर्जुन भगवान श्रीकृष्ा से धर्म के विषय में मोहग्रस्त हो प्रार्थना करता है। ''मै। आपका शिष्य हूॅ, आपकी शर.ा में आय है। आप कृपया अपने सदुपदेश से मेरा मोह दूर करें'' ।(19)

गीता का पर्यवसान भी शर.ागति से हुआ है। भगवान श्री कृष्ा अष्टाश अध्याय के अन्त में उपदेश की समाप्ति इस प्रकार करते है– '' हे अर्जुन! अब तू मेरे सर्वाधिक गोपनीय परम रहस्यमय इस वचन को सुन कि तू सब कुछ छोडकर मेरे अनन्य शर.ा में आजा तू निश्चय ही मुझे प्राप्त होगा'' ।(20) 5

भक्त के मन में भगवद्कृपा और भगवद्वचनों से आसक्ति रहती है। भक्त भगवान की अनन्य शर.ा में जाकर पू.ा शान्ति प्राप्त करता है।

''गीता में भगवान ने बारम्बार इस प्रकार आश्वासन किये है मेरे भक्त का कभी नाश नही होता है'' ।(21)

''कल्या.ाकर्म करने वाला कभी दुगर्ति को प्राप्त नही होता है'' ।;22द्ध

''यदि कोई अत्यंत दूराचारी भी निश्चत रूप से मेरा भजन करने लगे तो उसे साधु ही मानना चाहिए। क्योंकि वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाते है'' ।(23)

''इस अनित्य और सुखरहित लोक में मेरा भजन करना चाहिए'' ।(24)

''हे अर्जुन! तू मुझमें ही निरन्तर मन लगा, मेरा भजन कर मुझे अर्प.ा करके कर्मों द्वारा मेरा भजन कर, मुझे ही प्र.ाम कर, तु मेरी अनन्य शर.ा में आ जा और अपनी आत्मा को मुझमें प्रतिष्ठित कर दें, तू मुझे ही प्राप्त होगा'' ।(25)

Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved,

''मुझमें निरन्तर अपना मन लगाने वाले भक्तों का में शीघ्र ही जन्ममर.ारूप इस संसार–सागर से उद्वार करता है'' ।(26)

''अर्थात् आर्त,जिज्ञासु और ज्ञानी इन चार प्रकार के भक्तों में ज्ञानी सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि उसकी मुझमें अनन्य भक्ति होती है अतः उसे मैं अत्यन्त प्रिय हूॅ और वह मुझे अत्यन्त प्रिय है'' ।(27) 6

भक्ति में उपासना किया जाता है। भगवान का निरन्तर ध्यान करना, नाम जपना, निरन्तर स्मर.ा करते रहना। भगवान प्रसन्न होते है भक्त का भगवान से एकाकार हो जाता है। गीता में भक्ति और ज्ञान की एकता को महत्व दिया गया है।

''जो भक्त अनन्य भक्ति से मेरा निरन्तर चिन्तन करते हुए मेरी उपासना करते है उनकी भगवत्प्राप्ति (योग) और उसकी साधना (क्षेत्र) की मैं रक्षा करता हूॅ'' ।(28)

जेा भक्त अनन्य योग से मेरा ध्यान और उपासना करते है मैं जन्ममृत्युरूप संसार–सागर से उनका उद्वार करता हूॅ।(29)

'' हे अर्जुन! अनन्य भक्ति से ही मेरा तात्विक ज्ञान किया जा सकता है, मेरा प्रत्यक्ष दर्शन किया जा सकता है, और मुझमें प्रवेश करने मुझसे एकाकार हुआ जा सकता है'' ।(30)

भगवत्दर्प.ा बुद्धि से कर्म करने से और भगवान का निरन्तर ध्यान करने से साधक को ब्रम्हभाव का बोध होने लगता है इस बोध से अनन्य भक्ति का उदय होता है, अनन्य भक्ति से भगवान का तात्विक ज्ञान होता है और इस ज्ञान के उदय होते ही भक्त भगवान में प्रवेश कर जाता है और इस ज्ञान के उदय होते ही भक्त भगवान में प्रवेश कर जाता है अर्थात् भगवान से उसका एकीभाव हो जाता है'' ।(31)

यद्यपि परज्ञान और पराभक्ति एक ही है और ज्ञान तथा भक्ति का चरम लक्ष्य भी भगवत्प्राप्ति ही है तथापि निगू.ा उपासना को गीता का प्रपत्ति या शर.ागति पर अत्यन्त बल है। 7

गीता में भगवान ने अर्जुन की जो अन्तिम उपदेश दिया है कि ''हे अर्जुन! मुझमें निरन्तर मन लगाये रह, मेरी अनन्य भक्ति कर, मुझे सर्वस्व अर्प.ा कर, मुझे ही प्र.ाम कर, ऐसा करने से तू निश्चय ही मुझे प्राप्त करेगा, यह मेरी सत्यप्रतिज्ञा है क्योंकि तू मुझे अत्यंत प्रिय है। तू सब धर्मो को (कर्मों को) त्याग कर मेरी अनन्य शर.ा में आ जा, मैं तुझे सारे पापों से मुक्त कर दूॅगा, तू शोक मतकर'' ।(32)

उपसंहारः– श्रीमद्भगवत गीता में 18 अध्याय और 700 श्लोक है। गीता सस्कृत भाषा में है। भगवद्गीता में सृष्टि की उत्पत्ति, मानवउत्पत्ति, योग, धर्म, कर्म, ज्ञान, योग, यम–नियम, राजनीति,जीवनप्रबंधन,आत्मा, परमात्माा सभी का समावेश है। भगवत्गीता की बातें, मनूष्य अपनाकर,दुखों, वासनाओं,क्रोध, ईष्या, लोभ, मोह, संसारिक बंधनों से मूक्त हो सकता है। भगवद्गीता को हिदुं सनातन धर्म ग्रन्थों में पवित्र माना गया हैं।

श्रीमती एनीबिसे.ट के अनुसार– गीता साधक को सन्यास के उस निम्न स्तर से जहॉ पदार्थो का तथा कर्मों का त्याग किया जाता है निष्काम कर्मयोग के उस उच्च स्तर पर ले जाती है जहॉ कामना और आसक्ति का त्याग हो जाता है और जहॉ योगी समाधिस्थ होते हुए भी शरीर और मन से लोक कल्या.ा के लिए कार्य करते है।

सदंर्भ–सूची

1- यथेच्छसि तथा कुरू गीता–18–63

2- वरिष्ठों वचनं तव। गीता 18–73

3. गीता 02–16

4. गीता 02–22

5. गीता 07–07

6. गीता 07–24

7. गीता 15,16

8. गीता 15,17,18

9. योग कर्मसु कौशलय

10. गीता 11–54, 18–55, 8–22

11. गीता 06–21,22,23

12. गीता 10–10ददायि युद्वियोगं तं येन मामुपयन्ति ते।

13. गीता 04–36,33

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10 ,Iss 1, 2021

14. गीता 04—38

15. गीता 07—18

16. गीता 06—29,30

17. गीता 02—47

18. गीता 03—22,24वर्त एव च कर्मी.ि

19. गीता 02—07 शिष्यस्तेऽह शाधि मा त्वां प्रप.नम

20. गीता 18—64,06

21. गीता 09—31

22. गीता 06—40

23. गीता 09—30,31

24. गीता 09—33

25. गीता 09—34

26. गीता 12—07

27. 07—16,17

28. गीता 09—22

29. गीता 12—06—07

30. गीता 11—54

31. गीता 18—54,55

32. गीता 18—65,66